सहस्रार, प्रकाश का लोक

ईशा सरदेसाई द्वारा लिखित

बाबा मुक्तानन्द की महासमाधि के सम्मान में

सिद्धयोग महोत्सव सत्संग

शनिवार, ३१ अक्टूबर, २०२०

ऐसा लगता है कि मानव के रूप में हमारा अधिकांशतः कार्य है, अपने जीवन व अपने संसार को अर्थ प्रदान करना और ऐसा करके इस विशाल, सुन्दर, जटिल जगत में, जिसके हम एक भाग हैं, कुछ हद तक सुरक्षा का आभास पाना। जब हम बच्चे होते हैं तो अपने आस-पास की दुनिया को देखकर विस्मित होते हैं, पूछते हैं कि *वह* क्या है, हम कौन हैं, वहाँ की वह चीज़ हमसे कैसे जुड़ी है। यह जिज्ञासा, यानी इस संसार का अर्थ जानने-समझने और इसमें हम कहाँ हैं, हमारा क्या स्थान है, यह जानने-समझने की ललक, हमारी बढ़ती उम्र के साथ लुप्त नहीं होती। हम बस कल्पनाओं व अपने ऊपर लगे लेबलों को संचित करते जाते हैं, रीति-रिवाजों और परम्पराओं को, क्या अच्छा और मूल्यवान है इसके बारे में धारणाओं और मान्यताओं को इकट्ठा करते जाते हैं, और विभिन्न मात्रा में ये सब, जानने-समझने की हमारी ललक को तृप्त करते हैं।

फिर भी हमारे इस जगत के विषय में किसी प्रकार अनुमान नहीं लगाया जा सकता। चीज़ें कैसी होनी चाहिए, क्या सही है और क्या ग़लत है, हमें और दूसरों को कैसा बर्ताव करना चाहिए, इस बारे में हमारे *अपने* ही विचार हैं। किन्तु, अकसर, हम अपने आस-पास जो देखते हैं, वह हमारे मापदण्डों के अनुसार नहीं होता। हम भरसक प्रयास करते हैं कि हम ऐसा जीवन गढ़ सकें जो सुव्यवस्थित हो, जिसमें उद्देश्य हो, परन्तु, हमारे ख़ूब प्रयत्न करने के बावजूद हम अपने आपको ऐसी परिस्थितियों में पाते हैं जो तर्क या समझ से विपरीत होती हैं।

ऐसी परिस्थितियों में हम क्या करें?

सिद्धयोग पथ के विद्यार्थी होने के नाते हम जानते हैं कि यह अपने कर्तव्यों को छोड़ देने की बात नहीं है, और न ही इसका अर्थ सब कुछ छोड़कर चले जाना है। बल्कि, इसका अर्थ यह समझना है कि इस प्रकट जगत में कुछ *और भी है*। बल और शक्ति के भण्डार हमारे लिए उपलब्ध हैं जिनका कभी क्षय नहीं हो सकता, अर्थ व उद्देश्य से परिपूर्ण ऐसे स्रोत हमारे लिए उपलब्ध हैं जो उन परिस्थितियों पर निर्भर नहीं हैं जिन पर हमारा नियन्त्रण सीमित है। हमारे अन्दर पूरे के पूरे लोक-

लोकान्तर हैं जिनका अब तक पता ही नहीं लगाया गया है, प्रकाश का ऐसा लोक है जो इतना चकाचौंध कर देने वाला है कि बहिर्मुखी आँखें उसे देख ही नहीं सकतीं। हम श्रीगुरु के पास आते हैं, हम साधना करते हैं ताकि हम इस *आन्तरिक* जगत की अनुभूति करें—और फलस्वरूप एक विस्तृत व ज्ञानयुक्त बोध से इस पृथ्वी पर अपना जीवन जिएँ।

बाबा मुक्तानन्द ने अत्यन्त उत्साह से सहस्रार के विषय में सिखाया, उस सहस्रदल कमल के विषय में जो सूक्ष्म शरीर में सिर के ऊपरी भाग में स्थित है। एक साधक के रूप में हमारी यात्रा का गन्तव्य यही है; सिद्धयोग पथ पर हमारी साधना का लक्ष्य यही है।

प्रश्नोपनिषद् में कहा गया है कि सूक्ष्म शरीर में ७२० दशलक्ष नाड़ियों का समुदाय निहित है। ये नाड़ियाँ हमारी पूरी सत्ता में प्राण का संचार करती हैं। श्रीगुरु की कृपा से जब हमारे अन्दर कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होती है तो यह चेतन और दिव्य शक्ति मध्य नाड़ी यानी सुषुम्ना नाड़ी में से अपना ऊर्ध्वगमन आरम्भ कर देती है। सुषुम्ना नाड़ी का विस्तार स्थूल शरीर में मेरुदण्ड के समानान्तर है।

जैसे-जैसे कुण्डलिनी शक्ति ऊर्ध्वगमन करती जाती है, वैसे-वैसे उसके द्वारा आरम्भ की गई रूपान्तरण-प्रक्रिया को पोषित करने के लिए हम आध्यात्मिक साधना करते हैं। हम नामसंकीर्तन करते हैं, ध्यान करते हैं, दक्षिणा अर्पित करते हैं और हम श्रीगुरुगीता का पाठ करते हैं। जैसे-जैसे हम सिद्धयोग के अभ्यासों को करते जाते हैं, शक्ति क्रमशः छः चक्रों में से हर एक का शुद्धिकरण करती जाती है; चक्र सुषुम्ना नाड़ी पर स्थित कमल के आकार के वे केन्द्र-बिन्दु हैं जहाँ नाड़ियाँ आकर मिलती हैं। परिणामस्वरूप, प्राण सुषुम्ना नाड़ी से निकलने वाले लाखों नाड़ी समुदायों में से गतिमान होता है और उनमें संचित पूर्व संस्कारों व कर्मों को मिटाता जाता है। कुण्डलिनी शक्ति की यात्रा ऊपर, ऊपर, ऊपर की ओर बढ़ती जाती है—यह शक्ति हमें स्वच्छ, शुद्ध करती जाती है, हमें दुःख-कष्ट व कठोरता से मुक्त करती जाती है जिसे हमने अपने अन्दर दीर्घकाल से संचित किया है। वह हमारी सहायता करती है, ताकि हम अपने अन्दर अधिकाधिक सामंजस्य ला सकें; ऐसा वह तब तक करती है जब तक कि अन्ततः वह सिर के ऊपरी भाग में स्थित सहस्रार तक न पहुँच जाए।

संस्कृत भाषा में 'सहस्रार' शब्द का अर्थ है, 'एक हज़ार अरे'। इस अर्थ के ही अनुसार, इस कमल या चक्र के सहस्रदल मध्यबिन्दु से निकलकर बाहर की ओर, कुण्डलाकार में फैलते हैं और अनन्तता तक व्याप्त होते हैं। ये दल विशुद्ध श्वेतवर्ण के हैं, इनका आकार मनोहर है और इनसे प्रसरित होने वाला प्रकाश इतना तेजोमय होता है कि ऐसा कहा गया है कि इनकी दीप्ति सहस्रों सूर्यों के समान है।

सहस्रार के मध्य में विद्यमान है, जगमगाता ज्योतिर्मय नीलबिन्दु, जिसके बारे में बाबा जी अकसर सिखाते थे। नीलबिन्दु तिल के आकार का होता है, यह परम आत्मा का प्रतीक है और इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का उद्गम है।

सहस्रार के व नीलबिन्दु के दर्शन करना यानी जीवात्मा और परमात्मा के एकाकार होने की अनुभूति करना। इसी कारण, कहा जाता है कि सहस्रार के लोक में शब्द रह ही नहीं जाते। विचार वहाँ पहुँच नहीं सकते। सहस्रार मन व इन्द्रियों की शक्तियों से परे है; यह उस सबके परे है जिससे हमारा अस्तित्व परिभाषित होता है। इसकी जगह, यहाँ उदित होता है, पूर्णोऽहम् का यानी शुद्ध "मैं हूँ" का बोध। और, एक जन्म तक इस "मैं हूँ" में और भी उपाधियाँ जोड़ने के बाद, हमारा पुनर्मिलन होता है, उस प्रकाश के साथ जो हम तब थे, जब वह प्रकाश हमारी समस्त धारणाओं, कल्पनाओं, अपने ऊपर लगे लेबलों व सिद्धान्तों से संकुचित नहीं हुआ था। बाहरी चीज़ों के आधार पर जब हम अपनी पहचान बना लेते हैं, तब सुख-दुःख, प्रसन्नता-खिन्नता रूपी जिन द्वन्द्वों का हमारे अन्दर उदय-अस्त होता रहता है, यहाँ उनका हमारे ऊपर अधिकार नहीं रह जाता।

सहस्रार के निवास-स्थान में हमारा अस्तित्व बस. . . होता है। *मैं हूँ।* या, जैसा कि बाबा जी लोगों को कहना सिखाते थे : *मैं प्रकाश हूँ।*

इस सत्संग का शीर्षक है, 'दिव्य विश्रान्ति के लोक में वास करो'।

सिद्धयोग पथ अतुलनीय है, विशेष रूप से इसलिए क्योंकि इस पथ का अनुसरण करना हमें यहाँ, इस लोक में ले आता है। इसीलिए बाबा जी ने जो किया वह अत्यन्त क्रान्तिकारी था—उन्होंने शक्तिपात को विश्व के लिए सुलभ बनाया, उन्होंने लोगों को सहस्रार और नीलबिन्दु के विषय पर सिखावनियाँ प्रदान कीं और इनकी प्रत्यक्ष अनुभूति भी प्रदान की। बाबा मुक्तानन्द की कृपा से, भगवान नित्यानन्द की कृपा से और गुरुमाई चिद्विलासानन्द की कृपा से हम दिव्य विश्रान्ति के लोक में वास्तव में वास *कर सकते हैं।* सहस्रार कोई विचार या कल्पना नहीं है। यह कोई गूढ़ संकल्पना नहीं है जिसका प्रयोग केवल शास्त्रीय उपदेशों तक ही सीमित हो। यह एक जीता-जागता अनुभव है, आध्यात्मिक मार्ग के साधकों का, और यह आपका है जिसे आपको जानना है, अनुभव करना है।

© २०२३ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।